सबके लिए खेल | खेल के लिए समावेशी जगहें बनाना

राजश्री श्रीनिवासन

बात सन् 1999 की है जब मैं अपनी पीएचडी के काम के लिए एक स्कूल में आँकड़े एकत्र कर रही थी। यह स्कूल तब ख़ुद को 'इन्क्लूसिव' यानी समावेशी कहता था, क्योंकि उन दिनों में किसी नियमित स्कूल के अहाते में विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों की शिक्षा के लिए अलग से इमारत होने पर ऐसे स्कूल को इसी रूप में देखा जाता था। मैंने स्कूल की इस इमारत के फाटक के बाहर आधी छुट्टी या खेल के दौरान विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के शारीरिक तौर पर सक्षम भाई-बहनों और दोस्तों को खड़े देखा है। वे इस इन्तज़ार में रहते थे कि कब अपने भाई-बहनों को गले लगा पाएँ और ख़ुशी में उनके हाथ थामकर खेल के मैदान की ओर दौड़ें। उनमें से कई ऐसे थे जो दौड़ने की कोशिश में संघर्ष करते थे। मगर ध्यान देने की बात यह थी कि हँसी-ख़ुशी भरी चीख़ों, दोस्ती, गर्मजोशी और समानुभूति का खुला प्रदर्शन देखने को मिल रहा था। आधी छुट्टी या खेल का समय पूरा होने पर जब वापसी का वक़्त आता तो नज़ारा उदासी भरा होता। विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चे कक्षाओं में वापिस नहीं जाना चाहते थे। उनके भाई-बहन उन्हें मनाने के लिए कुछ देर उनके पास बैठते थे। शिक्षक उन्हें दिलासा देते हुए दिखाई देते थे। कई बच्चे शिक्षकों से पूछते थे — ''मैं 'उस' स्कूल में कब जाऊँगा/ जाऊँगी?'' — इशारा उस इमारत की ओर हुआ करता था जिसमें उनके शारीरिक रूप से सक्षम भाई-बहन पढ़ते थे। मेरे भीतर बेचैनी बनी रही। मन में रोज़-ब-रोज़ कई सवाल उभरते थे। क्या कभी ऐसा दिन आएगा जब अक्षमताओं से जूझते बच्चे और सक्षम बच्चे एक साथ खेलेंगे और पढ़ेंगे? क्या हमेशा बच्चों को ही दूसरों के हिसाब से ढलना और उनके लिए जगह बनानी होगी? क्या स्कूल और समुदाय बच्चों की ज़िम्मेदारी लेंगे और 'सब' बच्चों के रोज़मर्रा के जीवन के साथ मेल बैठाएँगे? इस बात को अब दो दशक से अधिक हो गए हैं और लगने लगा है कि सुरंग के दूसरे सिरे पर रोशनी है — हम समावेशी होने की भविष्यदृष्टि को साकार करने की ओर बढ़ पाएँगे।

एक समावेशी और शान्तिपूर्ण समाज की कल्पना के लिए छोटे बच्चों की सकुशलता एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण, मूलभूत अंग है। बच्चों के भौतिक, बोधात्मक, सामाजिक-भावनात्मक तथा नैतिक विकास में परिवार, हमउम्र साथी, स्कूल, मीडिया, इंटरनेट, समुदाय और सरकारी नीतियाँ निर्णायक भूमिका निभाते हैं। प्रगति के भिन्न-भिन्न सन्दर्भों के चलते बच्चों में अनुभवों की विविधता पाई जाती है। कई छोटे बच्चों के स्वास्थ्य, पोषण, सुरक्षा और देखभाल सम्बन्धी मूलभूत बातों के साथ समझौता हुआ है। बहिष्कार और हिंसा ने उन्हें हाशिए पर डाल दिया है हालाँकि इनमें से कुछ हिम्मत हारे बिना क्रियाशील भी हो निकलते हैं। बचपन के विविधतापूर्ण अनुभवों की प्रतिक्रिया में पिछले तीन दशकों में बच्चों से सम्बन्धित कई नीतियाँ और पहलक़दमियाँ सामने आई हैं। सर्वव्यापकता, समानता तथा राज्य के दायित्व के सिद्धान्त, बाल अधिकारों के दृष्टिकोण में कई तरह के वाद-प्रतिवादों के बावजूद स्थापित हैं। और बच्चों की देखभाल, सुरक्षा, बचाव और भागीदारी को अभिव्यक्त करने में ये महत्त्वपूर्ण सन्दर्भ-बिन्दु हैं। शिक्षा और स्वास्थ्य के साथ-साथ खेल को सब बच्चों के अधिकार के रूप में स्वीकार किया गया है क्योंकि सहज चंचलता से भरी इस गतिविधि में बच्चे साझा मानवता, समानुभूति, क्रियाशीलता और आज़ादी की गहराइयों को पाते हैं। लेकिन उन नीति-सन्दर्भों के बावजूद, जिनका उद्देश्य बच्चों के सामाजिक समावेश को बढ़ावा देने में सहायक होने का है, बहुत से बच्चे अब भी खेल से वंचित हैं।

यह लेख खेल के महत्त्व की चर्चा करेगा और अक्षमता से जूझने वाले बच्चों का समावेश इसका ख़ास सन्दर्भ है। पहले हिस्से में स्कूल तथा सामुदायिक जगहों पर सबको शामिल करते हुए खेल के लाभ और उसमें आने वाली अड़चनों की पड़ताल होगी। दूसरा भाग भारत में नीतिगत सन्दर्भों की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करेगा; साथ ही भारत में सामुदायिक खेल-स्थलों में समावेशी खेल के लिए किए गए कुछ प्रयासों की पड़ताल भी करेगा। लेख के आख़िर में, भारत में स्कूल के सन्दर्भों में समावेशी खेल के पोषण के लिए कुछ मोटे-मोटे सिद्धान्त निकाले जाएँगे; साथ ही अक्षमता से जूझते बच्चों के जीवन से जुड़े किरदारों के बीच सामूहिक रूप से कुछ किए जाने का आह्वान होगा। इस लेख में भारत सरकार के *राइट्स ऑव पर्सन्स विद डिसएबिलिटीज़ एक्ट 2016* में प्रस्तावित अक्षमता की परिभाषा को माना गया है : अक्षमताग्रस्त व्यक्ति का अर्थ है कोई ऐसा व्यक्ति जो लम्बे दौर की शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी क्षति झेल रहा हो, जिसकी वजह से बाधाओं का सामना करने में उसे अन्य व्यक्तियों के साथ समाज में समान रूप से पूर्ण और प्रभावी भागीदारी करने में रुकावट उत्पन्न होती हो।

समावेशी खेल क्या है?

खेल एक मूल्यवान और आनन्ददायक गतिविधि है। यह मज़ेदार, भावपूर्ण, स्वत: स्फूर्त, ख़ुद से शुरू की गई और बिना किसी अन्य उद्देश्य के की जाने वाली गतिविधि होनी चाहिए — एक ऐसी प्रक्रिया, जिसके माध्यम से बच्चों को कुछ सिखाया नहीं जाता बल्कि वे स्वतः सीखते हैं (पियाजे, 2007)। यह अभिव्यक्ति 'खेल के लिए खेल' का नज़रिया सामने रखती है और आमतौर पर बच्चों द्वारा खेल में भाग लेने की वजह यही होती है। बेसियो (2017) बचपन की व्याख्या के तौर पर खेल का ज़िक्र करते हुए कहते हैं, ''बच्चे द्वारा खेल के लिए समर्पित किया गया समय; खेलते समय उसकी एकाग्रता की शिद्दत; इस गतिविधि द्वारा प्रेरित और जगा दी गई भावनाओं की स्वयंसत्ता; उम्र, पर्यावरण से सम्बद्ध स्थितियों, संगियों और सीमाओं में बदलावों के साथ इसके द्वारा प्रदर्शित लचीलापन; प्रत्येक भौगोलिक क्षेत्र, समयकाल और संस्कृति में, स्थायित्व के साथ इसका बने रहना — इन सब विशेषताओं के चलते इन्सान के जीवन में खेल को बचपन नामक इस अद्वितीय समय के दौरान एक विशेष दर्जा प्राप्त है।'' इस तरह हम खेल को बच्चे के साथ ही विकसित होते हुए, बच्चे के विकास के पारिस्थितिक वातावरण के साथ शक्ल लेते हुए देखते हैं; इस वातावरण में वे भूगोल, इतिहास और संस्कृतियाँ भी शामिल हैं, जिनमें बच्चा स्थित होता है। खेल बच्चों के विकास से जुड़े ऐसे परिवर्तनों को भी खोलता चला जाता है जो उनके स्वास्थ्य और कल्याण के हक़ में होते हैं। परिवार की चारदीवारी में आनन्द और खोजबीन के स्रोत के रूप में शुरू होकर खेल सामुदायिक खेल-मैदानों या पार्कों तक पहुँचता है। खेल, शैक्षिक और विकास-सम्बन्धी हस्तक्षेप के सन्दर्भों में, कुछ विशेष उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सीखने के एक मध्यस्थ साधन के रूप में भी काम करता है।

सब बच्चों की तरह अक्षमताओं से जूझते बच्चे अपनी भावनाओं, इरादों, इच्छाओं और नज़रियों को साझा करते हैं और खेलना पसन्द करते हैं। शोध से इस बात की तस्दीक़ होती है कि इन बच्चों के लिए खेल दोस्त बनाने का एक महत्त्वपूर्ण तरीक़ा है (जीन्स एण्ड मैगी, 2012)। भारत में इनमें से कई बच्चों के लिए घर या स्कूल आधारित खेल ही, खेल के एकमात्र सन्दर्भ होते हैं। बहुत कम पार्कों या खेल-मैदानों में अक्षमताओं से जूझने वाले बच्चे खेलते नज़र आएँगे। स्कूलों और पार्कों तथा खेल-मैदानों जैसे सामुदायिक स्थलों पर खेल की जगहें अक्सर सामान्य क्षमताओं वाले बच्चों को ध्यान में रखकर ही बनाई जाती हैं। खेल-मैदानों में बने हुए ढाँचों का पहुँच से बाहर होना, खेलते हुए बच्चों की निगरानी के लिए प्रशिक्षित स्टाफ़ का न होना, बच्चों के लिए खेल का समय अलग से न रखा जाना, ख़ुद बच्चों की ओर से खेल के लिए तैयार न होना तथा खेल की बजाय रोगोपचार के सत्र रख दिया जाना — ये विशेष स्कूलों में आमतौर पर पाई जाने वाली कुछ चुनौतियाँ हैं जिनके चलते अक्षमता से जूझते बच्चों के लिए खेल के स्थान लगभग पहुँच से बाहर ही रहते हैं।

बच्चों के खेल से सम्बद्ध इन सीमाओं की जड़ कई कारणों में हो सकती है। सबसे पहले तो परिवेश से सम्बद्ध कारक हैं : सम्भव है कि जगहों, खिलौनों, सामग्रियों, खेल के उपकरणों की बनावट समावेशी न हो या ऐसी हो कि सब बच्चों की पहुँच में न आ पाएँ। फिर आते हैं सामाजिक कारक — इनमें माता-पिता, अन्य महत्त्वपूर्ण वयस्कों, शिक्षकों, समकक्षों तथा नीति-निर्धारकों की इस बात को लेकर मान्यताएँ और पूर्व धारणाएँ शामिल हैं कि अक्षमता से जूझते बच्चे सामान्य तौर पर और ख़ासतौर से खेल के सन्दर्भ में, क्या कर सकते हैं और क्या नहीं। तीसरे हैं बच्चों से सम्बन्धित कारक — इनमें शरीर की संरचनाओं और कार्यप्रणालियों में उपजी अक्षमता की वजह से बच्चों में स्वयं खेल पाने या खेल शुरू कर पाने की अक्षमता, थकान और अपने समकक्षों के साथ सम्प्रेषण में मुश्किलों जैसे कारक शामिल हो सकते हैं। आख़िरी सवाल माता-पिता द्वारा और स्कूलों में शिक्षकों तथा अन्य ग़ैर-शिक्षक कर्मचारी वर्ग द्वारा विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के साथ सम्बन्ध बना पाने का है, उनके साथ काम करने से सम्बद्ध योग्यता और क्षमताओं का है। अन्य शब्दों में, खेल का बच्चे की पहुँच में होना केवल डिज़ाइन या ख़ाके से जुड़ी बात नहीं लगती — यह छोटे बच्चों के खेल के साथ जुड़े विभिन्न भागीदारों के बीच मौजूद पारस्परिक सामाजिक क्रिया और सम्बन्धों के जटिल ताने-बाने में छुपा मसला है। यह देखते हुए कि अक्षमताएँ और उनसे जुड़े व्यक्तिपरक अनुभव कई तरह के हैं, सच में खेल का एक समावेशी स्थान विकसित कर पाना चुनौतीपूर्ण हो सकता है। उस स्तर तक पहुँचने के लिए बहुत अधिक काम करने की ज़रूरत है लेकिन समावेशी खेल के सकारात्मक प्रभावों को ध्यान में रखें तो इसके लिए तमाम तरह के प्रयास किए जाने चाहिए।

समावेशी खेल को यूँ परिभाषित किया जा सकता है कि यह कई तरह की क्षमताओं वाले बच्चों का आपस में खेलना है। यह ऐसे स्थल बनाने के बारे में है जहाँ सब बच्चे एक साथ खेल सकते हों, चाहे वे विशेष आवश्यकताओं वाले हों या सामान्य; एक ऐसा स्थल जहाँ बाधाओं को समाप्त किया जा सकता हो और सम्पर्क तथा सामाजिक स्वीकृति स्थापित किए जा सकते हों (जीन्स एण्ड मैगी, 2012)। समावेशी खेल की तीन महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ निकलकर आती हैं। एक, यह

विशेष पृष्ठभूमियों (शैक्षिक या सामुदायिक या पारिवारिक) में निहित, उभरते हुए सामाजिक सम्बन्धों की प्रक्रियाओं का ज़िक्र करता है जिनका आधार इस दर्शन में है कि सभी बच्चों को, वे चाहे अक्षम हों चाहे न हों, एक साथ खेलने का अधिकार है और ज़रूरत भी है। दो, यह समाज के सक्रिय व्यक्तियों पर ज़िम्मेदारी डालता है कि वे परस्पर अन्तःक्रिया के लिए ऐसी जगहें बनाएँ जहाँ खेल के सन्दर्भ में अलग-अलग पृष्ठभूमियों व क्षमताओं वालों बच्चों का स्वागत हो और जहाँ होने वाली खेल की प्रक्रियाओं में बच्चे पूरी तरह से भाग लेने के लिए आमंत्रित हों। तीसरी विशेषता यह है कि समावेशी खेल से इन सामाजिक रिश्तों के नतीजे सामने आते हैं। इससे सम्प्रेषण और जुड़ाव के लाभों का संकेत मिलता है, जो कि लोकतांत्रिक स्थलों और सामाजिक समावेश के निर्माण-पत्थर हैं और इनका उद्देश्य बच्चों का कल्याण है।

केसी (2010) खेल की समावेशी जगहों की वक़ालत करते हैं। इसलिए, कि इससे बच्चे, परिवार, स्कूल और व्यापक समुदाय सकारात्मकतौर से प्रभावित होते हैं। बच्चों को यह सन्देश मिलता है कि लोगों में समानताएँ और अन्तर, दोनों होते हैं। साथ ही उनमें इस बात का एहसास होता है कि खेल में उन्हें शामिल किया जा रहा है, सहयोग मिल रहा है (उनके हमउम्र उनके लिए प्रेरणा और जिज्ञासा के विशेष स्रोत होते हैं)। इससे परिवारों में भी कई तरह के नज़रियों की स्वीकृति पैदा होती है। अन्य परिवारों के साथ सम्पर्क के माध्यम से जीवन की गुणवत्ता को बेहतर बनाने में सहायता मिलती है। स्कूलों और समुदाय में एकजुटता और जुड़ाव का बोध होता है। अक्षमताओं से जूझते बच्चों के सामाजिक समावेश की इस तरह की प्रक्रिया के माध्यम से खेल को खेल के ही रूप में या चंचलता के रूप में देखा जा सकता है बजाय कि शिक्षा, व्यवहार और विकास-सम्बन्धी उद्देश्यों तक पहुँचने के माध्यम के रूप में (बेसियो, 2017), जो कि अक्षमताओं वाले बच्चों के मद्देनज़र अक्सर केन्द्र में होते हैं।

समावेशी खेल के लिए प्रयास

नीतिगत हस्तक्षेप

2011 की जनगणना के मुताबिक़ भारत में 2,68,10,557 अक्षमता से जूझते लोग हैं। यह देश की आबादी का 2.21 प्रतिशत है। 0 से 19 साल के आयु-समूह में अक्षमता से जूझ रहे बच्चों की कुल संख्या 78,64,636 है। इसके अलावा, 5 से 19 साल के बीच के अक्षमता से ग्रस्त बच्चों का 61 प्रतिशत ही किसी शिक्षा-संस्था में जा रहे थे (भारत की जनगणना, 2011)। इन बच्चों को शिक्षा तथा जीवन के अन्य क्षेत्रों में शामिल करना भारत की नीतियों तथा क़ानूनी ढाँचों में चर्चा का महत्त्वपूर्ण मुद्दा रहा है जिस पर बार-बार बात होती रही है। पिछले तीन दशकों में सूत्रबद्ध राष्ट्रीय स्तर की कोशिशें अन्तर्राष्ट्रीय नीतियों से भी प्रेरित रही हैं। बाल अधिकारों पर सन्धि बच्चे द्वारा अपनी आयु के अनुकूल आराम और फ़ुरसत में रहने, खेल और मनोरंजन की गतिविधियों में भाग लेने तथा सांस्कृतिक जीवन में खुलकर हिस्सेदारी करने के अधिकार को स्वीकृत करती है (अनुच्छेद 31; संयुक्त राष्ट्र संघ, 1989)। अक्षमताओं से ग्रस्त व्यक्तियों के अधिकारों की सन्धि ने इस बात पर बल दिया कि स्कूल व्यवस्था की गतिविधियाँ, खेलों में हिस्सेदारी, मनोरंजन तथा ख़ाली समय अन्य बच्चों की ही नहीं, अक्षमताओं से जूझते बच्चों की भी बराबर पहुँच में होने चाहिए (अनुच्छेद 30, उपधारा 5 डी; संयुक्त राष्ट्र संघ, 2006)। इन दोनों सन्धियों को भारत ने अनुमोदित किया है।

निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा (संशोधन) अधिनियम (भारत सरकार 2012) के आने पर एक बड़ा परिवर्तन आया। इसने निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा सुनिश्चित करके अक्षमताओं से जूझते बच्चों की सब श्रेणियों को नियमित स्कूलों के दायरे में ला दिया। अक्षमताओं से ग्रस्त लोगों के अधिकारों से सम्बद्ध अधिनियम में राज्य सरकारों के लिए स्पष्ट दिशा-निर्देश हैं कि स्कूलों को इनकी पहुँच में लाया जाए और खेलों तथा मनोरंजन की गतिविधियों में इन्हें हिस्सेदारी प्रदान की जाए। इसके अलावा इस कानून का अध्याय-1 [सेक्शन 2(ज़ेड ई)] सर्वव्यापी डिज़ाइन के विचार पर बल देता है। इसके अनुसार : उत्पादों, परिवेशों, कार्यक्रमों और सेवाओं को इस तरह से निर्मित किया जाए कि ये सब लोगों द्वारा अधिक-से-अधिक हद तक इस्तेमाल होने लायक़ हों और इनके लिए ढलने की या विशेषज्ञता प्राप्त होने की ज़रूरत न पड़े। समावेशी शिक्षाशास्त्रीय प्रथाएँ तथा बच्चों के लिए खेल की समावेशी जगहें निर्मित करने हेतु *युनिवर्सल डिज़ाइन लर्निंग* (यूडीएल) के सिद्धान्त कई देशों में इस्तेमाल किए गए हैं। 2018 में शुरू किया गया समग्र शिक्षा अभियान, समावेश का ज़िक्र स्पष्टतौर पर एक मार्गदर्शक सिद्धान्त के रूप में करता है। इस अभियान की रूपरेखा प्रस्तुत करने वाले दस्तावेज़ का अध्याय-4 (शिक्षा में विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों का समावेश) इस आवश्यकता का ज़िक्र करता है कि ''अक्षमताओं का सामना करने वाले सब बच्चों और युवाओं को समर्थ बनाया जाए कि वे समावेशी शिक्षा तक पहुँच बना पाएँ तथा सामान्य शिक्षा प्रणाली में उनके दाख़िलों, उसमें बने रहने की स्थितियों और उपलब्धियों में बेहतरी लाई जाए'' (भारत सरकार, 2018, पृष्ठ 61)। इसका एक अन्य उद्देश्य यह है कि स्कूल भवन से सम्बद्ध बाधाओं को दूर किया जाए ताकि कक्षा-कक्ष, प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय तथा शौचालय अक्षमताओं का सामना करने वाले विद्यार्थियों की पहुँच में आएँ। लेकिन खेल

के मैदान को इस उद्देश्य में शामिल नहीं किया गया है और इस अध्याय में खेल का कोई ज़िक्र नहीं है। भारत में अक्षमताओं की अवस्था पर हाल में यूनेस्को (2018) की समग्र रिपोर्ट आई है। इसमें भी समावेशी शिक्षा की राह में आने वाली बाधाओं से सम्बद्ध महत्त्वपूर्ण अध्याय और सिफ़ारिशों में खेल का या मनोरंजन का और न ही खेल के मैदान का ज़िक्र है। खेल के बारे में समावेशी शिक्षा के लिए रणनीति के तौर पर भी कोई विचार नहीं हुआ है। दूसरी ओर, शोध कार्य में स्कूल-पूर्व और प्राइमरी शिक्षा के सालों के दौरान खेल के महत्त्व को पहले से अधिक मान्यता मिल रही है।

इस तरह के अन्तर्विरोध कई नीति-दस्तावेज़ों में आमतौर पर दिखाई देते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) बुनियादी चरण में तथा शिक्षा की तैयारी के चरण में भी खेल को कक्षा-अभ्यास के लिए एक रणनीति के रूप में सुझाती है। इसके अनुच्छेद 6.10 में कहा गया है, ''दिव्यांग बच्चों को प्रारम्भिक स्तर से उच्च स्तर तक की शिक्षा प्रक्रियाओं में सम्मिलित होने के लिए सक्षम बनाया जाएगा।'' राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) के ही अनुरूप कार्यान्वयन के लिए 'सार्थक' (स्टूडेंट्स एण्ड टीचर्स होलिस्टिक एड्वांस्मेंट थ्रू क्वालिटी एजूकेशन यानी गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के ज़रिए विद्यार्थियों एवं शिक्षकों का समग्र विकास) नामक ढाँचे के तहत कहा गया है कि सभी राज्य/ संघ राज्य-क्षेत्र अक्षमताओं से जूझते बच्चों की आवश्यकताओं के ख़ाके तैयार करवाएँगे ताकि ये बच्चे पूरी तरह से स्कूली शिक्षा में भाग ले पाएँ। इनमें कलाओं, खेल तथा व्यावसायिक शिक्षा के ख़ाके शामिल रहेंगे। सार्थक के तहत खेल से सम्बन्धित गतिविधियों के लिए मौजूदा बाल भवनों को मज़बूत करने और उन्हें स्कूल क्लस्टरों के साथ एकीकृत करने की बात भी कही गई है। अगर इसे अच्छे से लागू किया जाता है तो यह सक्षम तथा अक्षमताओं से जूझते बच्चों को एक साथ लाने का एक बेहतरीन मौक़ा होगा। खेल और शिक्षा का नज़दीकी सम्बन्ध है — और क्योंकि बच्चों के अधिकार परस्पर-निर्भर तथा अविभाज्य हैं, सभी के लिए खेल के प्रावधानों हेतु अधिक संयुक्त प्रयासों को उच्च महत्त्व देना होगा।

नागरिक समाज की ओर से हस्तक्षेप

इन नीतिगत हस्तक्षेपों के साथ-साथ भारत में, अक्षमता से जूझते बच्चों के सार्वजनिक स्थानों में समावेश के लिए काम करने वाली नागरिक समाज की संस्थाओं का एक लम्बा इतिहास है। अभिभावक संघों ने ऐसी कई पहलक़दमियों और अभियानों का नेतृत्व किया है। ऐसा ही एक पथप्रदर्शक प्रयास बेंगलूरु स्थित ग़ैर-सरकारी संस्था *किलिकिलि* का है। इसका उद्देश्य बेंगलूरु में सार्वजनिक समावेशी जगहें विकसित करने का है ताकि अक्षमताओं से जूझते बच्चे बाक़ी बच्चों के साथ खेलने के अपने अधिकार को सुनिश्चित कर पाएँ। अपने इस काम को पूरा करने के लिए *किलिकिलि* दो तरह के हिस्सेदारों को एक साथ लाता है — एक ओर स्थानीय नगर निगम तथा दूसरी ओर अभिभावक, स्वयंसेवी, विशेष आवश्यकताओं वाले लोगों के लिए काम करने वाले संगठन, नागरिक समूह, आवासीय संघ तथा विशेष एवं सामान्य स्कूल। उन्होंने अब तक छह शहरों में खेल के आठ समावेशी स्थल बनाए हैं जिनमें से तीन बेंगलूरु में हैं। इन समावेशी स्थलों को साप्ताहिक गतिविधियों के आयोजन के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यह आयोजन स्वयंसेवी समूहों द्वारा किया जाता है और वे इसमें अक्षमता वाले व सक्षम, दोनों तरह के बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित करते हैं। एक समावेशी स्थल को विकसित करने के लिए उन्होंने कुछ दिशा-निर्देश भी विकसित किए हैं जिनका पालन करना होता है। उन्होंने एक विस्तृत पुस्तिका भी तैयार की है जिसमें खेल के प्रत्येक साज़-सामान या उपकरण के विकासात्मक महत्त्व पर रोशनी डालने के साथ-साथ उसके निर्माण से सम्बद्ध विशिष्ट विवरण भी दिया गया है। इस पुस्तिका को, बच्चों और उनके अभिभावकों से परामर्श करके, खेल स्थलों के बारे में उनके नज़रिए को मद्देनज़र रखते हुए तैयार किया गया है। इस काम का सबसे सुखद पहलू यह रहा है कि विभिन्न ज़िलों में सरकारी अधिकारियों के साथ काम करते हुए इस संस्था ने उनके नज़रिए में बदलाव देखा है — यह बात श्रीमती कविता कृष्णमूर्ति ने लेखक के साथ टेलीफ़ोन पर बातचीत में साझा की। सरकारी अधिकारी अधिक संख्या में समावेशी जगहों को बढ़ावा देने को उत्सुक हैं। वे *किलिकिलि* समूह के साथ, बिना समूह की ओर से कुछ कहे, ख़ुद अपनी पहल से सहयोग करते हैं। हमारे मुल्क में विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के प्रति नज़रिया आमतौर पर बचकाना है। उन्हें शिशुतुल्य, रोगी और चिकित्सा का पात्र समझा जाता है, उनके साथ बिना सोचे-समझे पितृसत्तात्मक व्यवहार किया जाता है और उनका उपचार करने की कोशिश की जाती है। ऐसे में बच्चों के जीवन से सम्बद्ध राजकाज से जुड़े लोगों द्वारा विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों की खुलेतौर पर सामाजिक स्वीकृति का यह रवैया संकेत है कि इन बच्चों के सामाजिक समावेश की ओर क़दम कुछ तो बढ़े हैं।

समावेशी स्कूली शिक्षा के निदेशों को ध्यान में रखें तो सभी बच्चों की सम्पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए मौजूदा स्कूलों को अपनी खेल-सम्बन्धी व्यवस्थाओं को पुनः निर्मित करना होगा। यह खेल के मैदानों और कक्षाओं, दोनों स्थलों पर होना होगा। नए स्कूलों को शुरुआत से ही इस तरह का ख़ाका निर्मित करना होगा कि समावेश की बात लागू हो पाए। स्कूल की व्यवस्था के तहत सार्वजनिक खेल-मैदानों के लिए समावेशी खेल की गुंजाइश कैसे निकाली जाए, इसके बारे में *किलिकिलि* द्वारा विकसित दिशा-निर्देशों और नियमावली-पुस्तिका के प्रारम्भिक विश्लेषण से कई सबक मिलते हैं।

पहला तो यह, कि समावेश की सोच में निहित मूल्यों की एक साझा दृष्टि हो यानी समता की पुनःपुष्टि हो, अलग-अलग तरह की क्षमताओं को फलने-फूलने का मौक़ा मिले, स्वतंत्रता की क्षमताओं को विकसित किया जाए तथा स्कूल में 'सबके' बीच भरोसे, समानुभूति और संवेदना को बढ़ावा दिया जाए। इस सबके बीच यह भी ध्यान रहे कि स्कूल बच्चों और वयस्कों का साझा समूह है। दूसरा, स्कूलों के प्रधानाचार्यों और शिक्षकों को सामाजिक एवं स्थानिक समावेश के महत्त्व को समझना होगा; स्कूल की प्रक्रियाओं को इस तरह पुनः तैयार करना होगा कि सभी बच्चों के सामाजिक और शैक्षिक अनुभवों में बेहतरी हो। तीसरा, स्कूल *युनिवर्सल डिज़ाइन लर्निंग* (यूडीएल) रूपरेखा का पालन कर सकते हैं जो एक-दूसरे के साथ सम्बद्धता, क्रियाशीलता व अभिव्यक्ति तथा प्रतिनिधित्व के कई माध्यमों के लिए योजना बनाने के सिद्धान्तों पर आधारित है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि सभी विद्यार्थी अपने सामाजिक-आर्थिक तथा सांस्कृतिक सन्दर्भों के भीतर रहते हुए ही सीख सकें। चौथा, स्कूल खेल से सम्बन्धित सभी प्रक्रियाओं में सुलभता और समावेश को संस्थागत रूप दें। पाँचवाँ, समावेश की दृष्टि को बनाए रखने तथा सकारात्मक नज़रियों को पोषित करने के लिए समुदाय के सदस्यों तथा माँ-बाप के साथ सहयोग को प्रोत्साहित किया जाए। आख़िरी बात यह कि जो स्थल बच्चों की नज़र में सबसे महत्त्वपूर्ण हैं, उन्हें निर्मित करते समय स्कूलों द्वारा बच्चों की आवाज़ों को शामिल किया जाए और उनकी भागीदारी को सुनिश्चित किया जाए।

भविष्य की ओर देखते हुए

विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों की भागीदारी और उनके लिए गुणवत्तापूर्ण जीवन को सुनिश्चित करने के लक्ष्य की तरफ बढ़ने में भारत ने एक लम्बा सफ़र तय किया है। शैक्षिक प्रक्रिया के तौर पर समावेश किसी सूत्र में बँधा हुआ नहीं है बल्कि वह किसी विशेष पृष्ठभूमि के सन्दर्भों, संस्कृति और सीमाओं की प्रतिक्रिया में आकार लेता है। सबको शामिल करने की बात अभी तो शब्दाडम्बर की बन्द जगहों में क़ैद है। इस स्थिति से बाहर निकलने के लिए ज़रूरी है कि समावेश के लिए सामूहिक अमल की इच्छा तथा दृढ़ता हो। कुछ सुझाव नीचे दिए जा रहे हैं जिन्हें नीति, सार्वजनिक जागरूकता, मुद्दे के साथ जूझने के साथ ही स्कूलों, शोध, बच्चों तथा अभिभावक संघों के स्तर पर सोचा जा सकता है।

भारत के अधिकतर स्कूलों में इस बात पर ध्यान बाद में जाता है कि खेल मैदान भी बनना है। स्कूल के मूलभूत ढाँचे से सम्बद्ध जिन बॉक्स पर सही का निशान लगना ज़रूरी होता है, खेल का मैदान भी उन्हीं बॉक्स में से एक है, बस। लेकिन अब से पहले हुए विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि एक खेलस्थल असल में स्थान, सामग्री, प्रभाव और सामाजिक सम्बन्धों की अन्तःक्रिया के स्थान होते हैं। इसलिए आवश्यकता है कि सामाजिक-स्थानिक स्तर पर समावेश के मक़सद से खेल के स्थलों को स्थापित करने के लिए दिशा-निर्देश विकसित किए जाएँ। भारत सरकार की ओर से, अक्षमताओं से जूझते लोगों के लिए अलग से खेल-केन्द्र स्थापित किए जाने के दिशा-निर्देश हैं। 2016 में यूनिसेफ़, *समर्थ्यम* और *एक्सेसिबल इण्डिया कैम्पेन* की ओर से संयुक्ततौर पर *मेकिंग स्कूल्ज़ एक्सेसिबल टू चिल्ड्रन विद डिसएबिलिटीज़* (स्कूलों को अक्षमताओं से जूझते बच्चों की पहुँच में लाना) शीर्षक से एक 'चेक लिस्ट' (जाँच-सूची) भी तैयार की गई है। समावेशी खेल की जगहों के निर्माण के अनुभव से लैस *किलिकिलि* तथा *गुड्डी* जैसी संस्थाओं के साथ साझेदारी से, मौजूदा और नए स्कूलों में ऐसी जगहों का ख़ाका तैयार करने में मदद मिल सकती है। सम्बन्धित राज्य के सरकारी अधिकारियों को ऐसी जगहें बनाने में प्रशिक्षित करने के लिए इन संस्थाओं को जोड़ा जा सकता है। इन संस्थाओं के काम के प्रचार से भी इस काम को फैलाने में मदद मिलेगी।

लोगों के नज़रियों में बदलाव लाने के लिए सार्वजनिक जागरूकता के साथ ही और समावेश तथा समावेशी खेल के मुद्दे के साथ जुड़ना आवश्यक है। लोगों में यह व्यापक मान्यता है कि अक्षमताओं से जूझने वाले बच्चे खेलने में असमर्थ होते हैं और उन्हें व्यक्तिगत सहारे की ज़रूरत होती है। इस तरह की बनी-बनाई सोच समावेश के रास्ते में बाधा है। इस सन्दर्भ में प्रिंट और डिजिटल मीडिया के माध्यम से खेल की जगहों तथा स्कूलों में सामान्य और विशेष क्षमताओं वाले बच्चों की परस्पर अन्तःक्रियाओं के यथार्थवादी चित्रण प्रस्तुत किए जा सकते हैं और इस तरह के प्रयासों के ज़रिए सामाजिक भागीदारी की बाधाओं को घटाया जा सकता है।

खेल की समावेशी जगहों का ख़ाका तैयार करने में बच्चों की भागीदारी भी बहुत महत्त्व रखती है। समावेशी जगहों के निर्माण से जुड़े सभी लोगों को सुनिश्चित करना होगा कि उनके कार्यक्रमों और नीतियों के बनने में बच्चों के नज़रिए शामिल रहें। सामान्य और विशेष क्षमताओं वाले बच्चों, दोनों को ही जागरूकता पैदा करने वाले अभियानों में भाग लेने के लिए भी प्रोत्साहित करना होगा। स्कूल के भीतर और उसके आसपास समावेशी खेल-स्थलों के लिए रणनीति विकसित करने में बच्चों को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभानी होगी।

महत्त्वपूर्ण यह भी है कि सेवा-पूर्व और सेवारत शिक्षकों, प्रधानाध्यापकों तथा स्कूल व्यवस्था से सम्बद्ध सरकारी अधिकारियों को बच्चों के विकास और शिक्षा में खेल की अहमियत के बारे में शिक्षित किया जाए। साथ ही उन्हें शिक्षा तथा सामाजिक परिवर्तन में समावेशी खेल के महत्त्व के बारे

में भी शिक्षित किया जाना भी ज़रूरी है। कई स्कूलों में खेल को समयसारणी में नहीं रखा जाता और 'पाठ्यक्रम पूरा करने' के लिए किसी विषय के बदल के तौर पर रख लिया जाता है। अक्षमता से जूझने वाले बच्चों के लिए खेल का ख़ाली समय रोगोपचार तथा स्वास्थ्य-बहाली के वास्ते ले लिया जाता है। खेल का समय मनबहलाव और शौक़िया काम के लिए है या फिर समय की बरबादी और फ़िज़ूलख़र्ची है — ऐसे नज़रियों को भी स्कूल के सन्दर्भों में फिर से जाँचने की ज़रूरत है। इन मुद्दों पर शोध भी बहुत महत्त्वपूर्ण है।

समावेशी और शान्तिपूर्ण समाज की ओर प्रतिबद्धता को आगे बढ़ाने के लिए सामूहिक क्रियाशीलता का होना एक तात्कालिक ज़रूरत है। शायर और गीतकार गुलज़ार की एक उपयुक्त और मौज़ू टिप्पणी इस काम के लिए आवश्यक दृढ़ता को सारगर्भित करती है। उन्होंने यह टिप्पणी *'एक कोशिश : द स्टोरी ऑफ़ आरुषि'* (मेहता, 2020) शीर्षक की पुस्तक में की है। यह पुस्तक भोपाल स्थित आरुषि नामक संस्था के तीस-साला सफ़र के बारे में है, जो विशेष क्षमताओं वाले बच्चों के साथ काम करती है। गुलज़ार कहते हैं, ''अभी करो, जब यह तुम्हारे हाथ में है, क्योंकि यह अभी नहीं हुआ तो शायद आने वाले पचास साल में भी न होगा; बाद में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति पीछे के बारे में सोचेगा तो ताज्जुब करेगा कि क्यों तुमने यह नहीं किया और क्यों तुम कुछ भी फ़ैसला लेने में हिचकिचाए; यह एक विवादास्पद मुद्दा बन जाएगा'' (पृष्ठ 61, स्वतंत्र अनुवाद)। यहाँ-के-यहाँ और अभी-के-अभी, सबके लिए खेल को हक़ीक़त बनाया जा सकता है।

References

Besio, S (2017). Need for play for the sake of play. In *Play Development in Children with Disabilities*. Besio, S, Bulgarelli,D & Stancheva-Popkostadinova (Eds). Italy: De-Gruyter Open

Casey, T. (2010), *Inclusive Play Practical Strategies for Children from Birth to Eight* (2nd edn). London: Sage

Government of India (GoI). (2012). The Right to Free and Compulsory Education (Amendment) Act. New Delhi

Government of India (GoI). (2016). The Rights of Persons with Disabilities act, 2016. New Delhi

Government of India (GoI). (2018). Samagra Shiksha Abhiyan: An Integrated Scheme for School Education. Framework for Implementation. New Delhi.

Government of India (GoI). (2020). National Education Policy. New Delhi

Government of India (GoI). (2021). SARTHAQ (part 1): Implementation Plan for National Educational Policy 2020. New Delhi

Gudgudee (2021). https://www.gudgudee.in/

Jeanes, R. & J. Magee (2012). 'Can We Play on the Swings and Roundabouts?': Creating Inclusive Play Spaces for Disabled Young People and Their *Families. Leisure Studies* 31, pp. 193– 210.

Kilikili (2007). https://www.kilikili.org/who_we_are.html

Mehta (2020). *Ek Koshish: The Story of Arushi*. New Delhi: Manjul

Piaget, J. (2007). The child's conception of the world: A 20th century classic of child psychology (2nd ed.). Lanham: Rowman and Littlefield.

UNESCO. (2019). N for Nose: State of the Education Report for India 2019: Children with disabilities. New Delhi

United Nations (2006). United Nations Convention on the Rights of Persons with Disabilities.



राजश्री श्रीनिवासन अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु के स्कूल ऑफ़ एजूकेशन में प्रोफ़ेसर हैं। उनकी रुचि शिक्षक शिक्षा और बाल विकास में है। उनसे rajashree@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : रमणीक मोहन